२०,०५,००० वर्ष पूर्व मनु ने अपने शिष्य और पुत्र, इस पृथ्वी के सार्वभौम सम्राट् महाराज इक्ष्वाकु के प्रति भगवद्गीता का प्रवचन किया था। वर्तमान मनु की आयु लगभग ३०,५३,००,००० वर्ष है, जिसमें से १२,०४,००,००० का व्यय हो चुका है। मनु से पूर्व श्रीभगवान् अपने शिष्य सूर्यदेव विवस्वान् के समक्ष गीतोपदेश कर चुके थे। इस अनुमान के अनुसार गीता का सर्वप्रथम प्रवचन कम से कम १२,०४,००,००० पूर्व हुआ और मानव समाज में भी लगभग २०,००,००० वर्ष से इसका प्रचलन रहा है। आज से पाँच हजार वर्ष पहले भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को श्रोता बनाकर इसका पुनः गायन किया। स्वयं गीता और गीतागायक भगवान् श्रीकृष्ण के अनुसार श्रीमद्भगवद्गीता के इतिहास का यह स्थूल अनुमानमात्र है। गीता सूर्यदेव विवस्वान् के प्रति कही गयी थी, क्योंकि वे क्षत्रिय हैं; वस्तुतः सम्पूर्ण सूर्यवंशी क्षत्रियों के जन्मदाता हैं। स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण के मुखारविन्द की वाणी होने से भगवद्गीता वेदतुल्य अपौरुषेय ज्ञान है। वेद-वाणी को उसके मूलरूप में वाग्चातुरी के बिना स्वीकार किया जाता है। इसलिए गीता को भी इसी प्रकार यथारूप में अंगीकार करना होगा। तार्किक अपनी उच्छृंखल विधि से गीता का कुछ भी मनमाना अर्थ लगा सकते हैं; परन्तु भगवद्गीता का यथार्थ स्वरूप उन्हें सदा अलभ्य रहेगा। अतएव भगवद्गीता को गुरुपरम्परा के अनुसार यथारूप में हृदयंगम करना ही कल्याणकारी है। इसी सिद्धान्त की स्थापना के लिए यहाँ कहा गया है कि श्रीभगवान् ने सूर्यदेव को, सूर्यदेव ने पुत्र मनु को और मनु ने इक्ष्वाकु को भगवद्गीता का उपदेश किया।

एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः।
स कालेनेह महता योगो नष्टः परंतप।।२।।

एवम् =इस प्रकार; **परम्परा** =शिष्यपरम्परा से; **प्राप्तम्** =प्राप्त हुए; **इमम्** =इस विज्ञान को; **राजर्षयः** =राजर्षियों ने; **विदुः** =जाना; **सः** =वह; **कालेन** =कालक्रम से; **इह** =इस संसार में; **महता** =महान्; **योगः** =श्रीभगवान् से जीव के सम्बन्ध का विज्ञान; **नष्टः** =लोप हो गया; **परंतप** =हे शत्रुविजयी अर्जुन।

अनुवाद

इस प्रकार शिष्यपरम्परा के द्वारा यह परम विज्ञान प्राप्त किया गया और राजर्षियों ने इस विधि से जाना; किन्तु काल-क्रम से वह परम्परा खण्डित हो गई, जिससे यह विज्ञान अपने यथार्थ रूप में लुप्तप्रायः हो गया।।२।।

तात्पर्य

यहाँ स्पष्ट रूप से कहा गया है कि गीता विशेष रूप से राजर्षियों के लिए प्रयोजित है; उन्हें लोकशासन के रूप में इसके लक्ष्य को कार्यान्वित करना है। निस्सन्देह भगवद्गीता का अभिप्राय उन मनुष्य रूपधारी असुरों के लिए कदापि नहीं था, जो नाना प्रकार से गीता की गौरव-गरिमा को नष्ट-भ्रष्ट करते हुए सभी का अहित